सम्पादक की कलम से

विभिन्न कांग्रेसी प्रधानमंत्री मुसलमानों की कमजोर आर्थिक हालत का हवाला देते हुए उनके लिए न योजनाएं और नए अवसरों की बात करते हैं। सच्चर आयोग सहित कई आयोगों और समितियों ने भी इसी तरह की बात कही है। लेकिन ये संस्थाएं और नेता सारे हालात को उनकी पूरी पृष्ठभूमि और समग्रता के चश्मे से देखने में प्राय: नाकाम ही रहे हैं। मुसलमानों के आर्थिक पिछड़ेपन की असलियत को जानने के लिए इस मुद्दे को राजनैतिक पूर्वाग्रह से मुक्त होकर देखने की जरूरत है।

अच्छा होगा अगर हम आरक्षण से सम्बंधित संविधान सभा की कार्रवाई के कुछ भागों को देख लें। लेकिन उससे पहले मैं प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरूके देश के तमाम मुख्यमंत्रियों के नाम लिखे गए २७ जून १९६१ के पत्र की कुछ पंक्तियां उद्धत कर रहा हूं-''अगर हम लोग साम्प्रदायिकता और जातीय आधार पर आरक्षण की ओर बढ़ते चले गए तो हम लोग मेधावी और योग्य लोगों को दूसरे और तीसरे दर्जे पर फेंक देंगे। जब मैं सुनता हूं कि आरक्षण का यह व्यापार साम्प्रदायिकता के आधार पर कितनी दूर तक चला गया है तो मुझे वेदना होती है। यह जानकर मैं और चकित होता हूं कि पदोन्नति के मामले में भी साम्प्रदायिक और जातीय आधार पर वरीयता मिलने लगी है। यह केवल गलती का ही नहीं, विनाश का रास्ता भी है।'' अब मैं संविधान सभा के कुछ प्रमुख मुसलमान प्रतिनिधियों को उद्धत करूंगा। पश्चिम बंगाल के निजामुद्दीन अहमद ने और बातों के अलावा कहा था-''मुस्लिम आरक्षण मनोवैज्ञानिक रूप से पृथक निर्वाचक मण्डल से जुड़ा है और उसका सर्वनाशी परिणाम हमने देख लिया है। इसलिए मैं कहूंगा कि साम्प्रदायिक आरक्षण को आगे बढ़ाने से अप्रिय यादें ताजा होती रहेंगी। जिससे यह कदम हर तरफ कड़वाहट घोलने वाला साबित होगा और मैं कहना तो ये भी चाहूंगा कि अगर ऐसा दस साल के लिए भी आ जाता है तो बहुत ही बुरा होगा। मैं अपनी पूरी ताकत से मुस्लिम आरक्षण का विरोध करता हूं।

उत्तर प्रदेश की बेगम एजाज रसूल- ''मैं सोचती हूं कि आरक्षण आत्मघाती हथियार साबित होगा। जो अल्पसंख्यकों को बहुसंख्यकों से हमेशा के लिए दूर कर देगा। इससे अल्पसंख्यकों के साथ बहुसंख्यकों के सद्भाव की कोई गुंजाइश नहीं बचेगी। यह अलगाववाद और साम्प्रदायिकता की धारणा को बनाए रखेगा, जिसे समाप्त हो जाना चाहिए। दस वर्षों के लिए भी इसे लागू नहीं करना चाहिए। क्योंकि यह दस वर्ष देश के जीवन में बहुत महत्वपूर्ण होंगे। मेरा दूसरा तर्क यह है कि अभी भी भारत में अलगाववाद की धारणाएं विभिन्न समुदायों के बीच है। उसे समाप्त होना चाहिए। मैं ऐसा सोचती हूं कि यह अल्पसंख्यकों के हित में होगा कि वह बहुसंख्यकों की धारणा के साथ मिलजुल जाएं।''

महमूद इस्माइल खां- 'मैं बहुत प्रसन्न हूं कि अगर सीटों का यह आरक्षण होता तो साम्प्रदाायिकता में जीवन संचार होता। मैं बहुसंख्यक समुदाय को इसके लिए धन्यवाद देता हूं। मैं बहुसंख्यक समुदाय को अपनी संख्या बल का अपने फायदे के लिए इस्तेमाल न करने के लिए भी धन्यवाद देता हूं।' सच्चर कमेटी की रिपोर्ट तरह-तरह की उन मिथ्या धारणाओं पर सरकारी ठप्पा लगाती हैं जो पहले से ही विद्यमान हैं। जैसे मुसलमान शैक्षिक, आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़े हुए हैं। क्या केवल मुसलमान ही पिछड़े हुए हैं? अपने इस देश में ३००० से ज्यादा जातियां हैं। उसमें दर्जन-दो-दर्जन ऐसी जातियां हैं जो शैक्षिक या आर्थिक रूप से पिछड़ी नहीं हैं। बाकी सारा समाज पिछड़ा है, इसमें मुसलमान भी हैं। राजनैतिक भागीदारी के लिए भी यही सच है। हजार से अधिक पिछड़ी जातियां होंगी, जिनको राजनैतिक भागीदारी संख्याबल कम होने के कारण नहीं मिल पाती। अंग्रेजी राज के दौरान मुस्लिम मानसिकता में यह बात घर कर गई थी कि मुसलमानों को अंग्रेजी शिक्षा का बहिष्कार करना चाहिए। वैसी अंग्रेजी-विरोधी बलबती धारणा हिन्दुओं में नहीं थी। सर सैयद अहमद खां ने मुसलमानों के लिए अंग्रेजी शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। इस दिशा में उन्होंने बहुत काम भी किए। लेकिन आज भी मुसलमानों में वह अवरोध बचा हुआ है। इसी तरह १९४७ के बाद दशकों तक चलने वाले हिन्दी आंदोलन के कारण कुछ राज्यों ने शिक्षा पद्धति में हिन्दी का आग्रह बनाए रखा। कुछ अन्य राज्यों ने यह आग्रह नहीं रखा। यह परिणाम जब सामने आया कि ये राज्य सरकारी सेवाओं के मामले में पिछड़ गए हैं, तब इन राज्यों ने प्राथमिक स्तर से ही अंग्रेजी पढ़ाना शुरू किया। ऐसे राज्यों में पश्चिम बंगाल भी है। अब वहां प्राथमिक कक्षाओं से ही अंग्रेजी शिक्षा दी जाने लगी है।

अब तो करीब करीब प्राथमिक कक्षाओं से अंग्रेजी का अध्ययन सभी जगह प्रचलित होता जा रहा है। मुसलमानों में यह हिचक कुछ मात्रा में अभी भी है, बड़ी संख्या में मदरसों का खुलना और उनकी संख्या बढ़ते जाना यह बताता है। सच्चर आयोग ने यह बताया है कि केवल ४ प्रतिशत मुसलमान मदरसा शिक्षा में जाते हैं। लेकिन आम मुसलमान वहां न भी जाता हो तो भी अपने बच्चों को कारीगरी की शिक्षा देते हैं। अभी सच्चर कमेटी के आंकड़ों का पूरा सत्यापन नहीं हुआ है, खासतौर से सामाजिक और शैक्षिक आंकड़ों का।

अधिकार चाहिए तो क्यों भूल जाते हैं कर्तव्य

भारत को स्वतंत्र हुए छह दशक से भी ज्यादा बीत चुका है। इतने सालों में हमने आजादी का मतलब सिर्फ अधिकारों के रूप में ही समझा है। स्वतंत्रता की मूल अवधारणा को नागरिक कब का भूल चुके हैं। भारतीय संविधान में उल्लिखित मौलिक अधिकारों के अलावा अन्य अधिकारों को हासिल करने में हर व्यक्ति अपनी पूरी शक्ति लगा देता है। किसी भी संवैधानिक अधिकार का हनन होने पर वह अदालत की चौखट तक पहुंच जाता है। आज जब हम देश का ६३वां स्वतंत्रता दिवस मना रहे हैं तो ऐसे में हम भारतीय नागरिकों को अपने अधिकारों को अक्षुण्ण बनाए रखते हुए उन कर्तव्यों को भी याद करना चाहिए जिन्हें हम अनजाने में भूलते जा रहे हैं।

अधिकारों ने हमें अंधा बनाया-

राजनीति शास्त्र के विद्वान और छात्र जानते हैं कि भारत एक ऐसा उदार लोकतांत्रिक देश है जिसकी मिसाल खुद अमेरिका जैसा ताकतवर देश देता है। इसने गंभीर मंथन और विमर्श के बाद बनाए गए संविधान में स्वतंत्रता के अधिकार को सर्वोपरि रखा। जीवन की रक्षा और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार निश्चित तौर से महत्वपूर्ण हैं। पर व्यक्तिगत स्वतंत्रता की आड़ में हम लोग कई बार दूसरों के जीवन में प्राय: खलल डालते हैं। अधिकारों ने हमें अंधा बना दिया है। इसका छोटा सा उदाहरण यह है कि अगर आप तेज आवाज में संगीत सुनते हैं या धार्मिक आयोजनों में लाउडस्पीकर बजाते हैं तो यह आपका व्यक्तिगत अधिकार हो सकता है मगर इसका दूसरों के जीवन पर जो प्रभाव पड़ता है उस समस्या से आप कन्नी काट लेते हैं।

हमें अभिव्यक्ति की आजादी का अधिकार है। यह बहुत बड़ा अधिकार है जिसका पूरे उत्तरदायित्व से निर्वहन करने में कई बार हम लोग भटक जाते हैं। अभिव्यक्ति का तात्पर्य है कि हम अपने मन की बात बिना किसी दबाव में कहें, मगर ऐसी कोई बात न कहें जिससे किसी व्यक्ति की मानहानि होती हो। निराधार और तथ्यहीन आलोचना का अर्थ है कि हम इस अधिकार को पूरी पवित्रता से नहीं निभा रहे।

अधिकारों का दुरुपयोग कब तक?

इन्हीं अधिकारों में एक अधिकार यह भी है कि कोई भी भारतीय कहीं भी जाकर कोई भी व्यवसाय कर सकता है। मगर हमारे बीच ऐसे कई लोग हैं जो अपने 'धंधे' से दूसरे के लिए मुसीबत पैदा कर देते हैं। मिसाल के लिए आप अपने जीवन की रक्षा के लिए फुटपाथ पर चलना चाहते हैं मगर दुर्भाग्य से वहां माफिया और पुलिस की शह पर कारोबारी अपना सामान जमा कर व्यवसाय कर रहा है तो कहीं भी व्यवसाय करने का उसका अधिकार दूसरे व्यक्ति के अपने जीवन की रक्षा के अधिकार का हनन है। यह अधिकार का दुरुपयोग है। ऐसा हम कब तक करते रहेंगे।

क्यों नहीं होता अधिकारों का सदुपयोग?

भारतीय संविधान सभा के सदस्यों ने बड़ी मेहनत से कई महीनों के मंथन के बाद नवम्बर १९४९ में देश के नागरिकों को कई अनूठे अधिकार दिए जो आज भी कई देशों के नागरिकों को हासिल नहीं हैं। इनमें से एक शिक्षा का अधिकार है। इस अधिकार की न केवल सरकार ने उपेक्षा की बल्कि खुद नागरिकों ने भी बरसों इस पर ध्यान नहीं दिया। अगर ऐसा नहीं होता तो भारत की ग्रामीण आबादी निरक्षर नहीं रहती। साक्षर भारत के निर्माण में पिछले अप्रैल से शिक्षा के अधिकार को अनिवार्य किया जाना अहम कदम माना जा सकता है। हर बच्चें को शिक्षा देना अहम कदम माना जा सकता है। अगर हम अब भी इस अधिकार का सदुपयोग नहीं करेंगे तो वंचित और आर्थिक रूप से पिछड़ा वर्ग हाशिए से बाहर नहीं आ पाएगा।

दोहन हुआ अधिकारों का-

कुछ बरस पहले हर भारतीय को संसद ने सूचना का अधिकार दिया था। यह एक ऐसा अधिकार था, जिससे हम जान सकते हैं कि सरकार क्या नीतियां बनाती है। विकास कार्यों के लिए कितनी राशि आवंटित हुई। कितना खर्च हुआ। मगर इस अधिकार का भी लोग दोहन करने लगे। यह कुछ उसी तरह हुआ जिस तरह कुछ लोगों ने छोटे-मोटे मामलों में भी जनहित याचिका लगा कर अदालतों का समय बर्बाद करना शुरूकर दिया। सूचना के अधिकार में भी ऐसा हुआ। प्रतिद्वंद्वियों और पड़ोसियों को परेशान करने के लिए सरकारी दफ्तरों में इस अधिकार की आड़ में अर्जियां लगाई जाने लगी। हालत यह है कि अब इस अधिकार में संशोधन के बारे में सोचा जाने लगा है। अधिकार मिलने पर हर नागरिक को अपनी जिम्मेदारी का भी अहसास होना चाहिए।

हम क्यों भूल गए कर्तव्य-

अधिकार तो हमें याद रहते हैं मगर हम सभी अपने कर्तव्यों को भूल जाते हैं। आज जब हम आजादी का पर्व मना रहे हैं तो हमें उन कर्तव्यों को भी याद करना चाहिए। दरअसल अधिकार और कर्तव्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यानी अधिकार चाहिए तो कर्तव्य को भी निभाओ। भारतीय संविधान में भी कर्तव्यों की व्याख्या की गई है। इसे मूलभूत कर्तव्य बताते हुए हर नागरिक से इसकी अपेक्षा की गई है। उन कर्तव्यों में उस एक बिंदु का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा जिसमें कहा गया है कि हर नागरिक स्वतंत्रता संग्राम के उन आदर्शों को दिल में संजो कर रखेगा और पालन करेगा जिस पर चल कर हमें यह आजादी हासिल हुई है। खेद के साथ कहना पड़ता है कि बहुत कम ही लोग होंगे जो स्वतंत्रता संग्राम के प्रेरक तत्वों को याद करते होंगे। और देश के लिए मर मिटने और कुछ करने का जज्बा रखते होंगे। ऐसा होता तो भारत में भ्रष्टाचार का स्याह चेहरा नहीं दिखता।

आज जब देश में बेकारी, भुखमरी और नाइंसाफी के साथ असमानता दिखाई पड़ती है तो अहसास होता है कि हम भारतीय अपने कर्तव्यों का ठीक से निर्वहन नहीं कर पाए। हममें से कई लोग भ्रष्टाचार में लिप्त हो गए। जो राशि जनता के हित में खर्च होनी थी या जिनका देश के विकास से वास्ता था वह मंत्रियों, अफसरों, ठेकेदारों और उनके गठजोड़ वाले समूह के पेट में चला गया। राष्ट्रमंडल खेलों के लिए चल रहे विकास कार्यों में भ्रष्टाचार आपको किस बात का संकेत देता है? जाहिर है आयोजन से जुड़े लोगों की भारत के सम्मान और आदर्श की परवाह नहीं है।

कर्तव्य निभाइए फिर अधिकार मांगिए-

ज्यादातर भारतीयों को अपने कर्तव्यों की जानकारी नहीं। हमारे मूलभूत कर्तव्य में यह भी शामिल है कि हम अपनी सांस्कृतिक विरासत को संजो कर रखेंगे। लेकिन इसमें कितनों की दिलचस्पी है। हमने इसमें क्या योगदान दिया। उल्टे हमने उस पर कब्जा करने और विकृत करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। दिल्ली में इसके कई उदाहरण मिल जाते है। यही नहीं सांस्कृतिक विरासत वाली जगह के आसपास लोगों ने मकान तक बना लिए।

इसी तरह झील, नदियों, जंगलो और जीव जंतुओं की सुरक्षा हमारा कर्तव्य है। यह एक ऐसा कर्तव्य है जिससे हम पूरे पर्यावरण को बचा सकते हैं। लेकिन हम भारतीयों ने न केवल जंगल काटे, नदियां मैली कीं, बल्कि प्लास्टिक के प्रयोग और आधुनिक जीवन शैली से ओजोन की परत तक को नुकसान पहुंचाया। इसी तरह सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है मगर हड़ताल और रैलियों में हम लोग इसे नुकसान पहुंचा कर अधिकार की बात करते हैं और हमें शर्म तक नहीं आती।

सबसे बड़ी बात जिसकी ओर संविधान में साफ लिखा है कि सभी समुदायों के बीच सद्भाव और भाईचारे को बढ़ाना हम सबका कर्तव्य होगा, हम इसे भूल कर वैमनस्य बढ़ाते हैं। पहले पड़ोसियों से, फिर समुदाय के बीच, फिर समाज से होते हुए एक राज्य से दूसरे राज्य के बीच। इसी तरह नारी का सम्मान और उसकी गरिमा की रक्षा को हमारे कर्तव्य में शामिल किया गया मगर दुर्भाग्य से जितना अपमान भारत में नारियों का होता है, उतना शायद ही किसी देश में होता हो। जब हम मूलभूत कर्तव्यों को निभाने में नाकाम हैं तो अधिकार मांगने से पहले हमें कई बार सोचना चाहिए।